Indian Journal of Social Sciences and Literature Studies
ISSN 2349-5634 (Print) ISSN 2455-0973 (Online)
Vol. 5, Issue 1, March 2019

आदिवासी समाज व्यवस्था एवं संस्कृति

*પ્રો. ડૉ. સુરવીરસિંહ આઈ. ઠાકોર
આર્ટસ્ એન્ડ કોમર્સ કૉલેજ,
ઓલપાડ, જિ. સુરત

प्रस्तावना :

पिछले कुछ समय से आलोचक जगत में आदिवासी समाज और साहित्य विशेष चर्चा के केन्द्र में रहा है । आदिवासी चेतना का उद्‌भव, आदिवासी आंदोलन का विकास तथा आदिवासी साहित्य का अस्तित्व में आना युग की एक अनिवार्यता है । भारतीय समाज व्यवस्था पर सवर्णो का वर्चस्व रहा है । जिस के कारण आदिवासी पिछड़ते गये तथा राष्ट्र की मुख्य धारा में शामिल होने से वंचित रहे । शोषित, पीडित, अपमानित, वंचित, निराश्रित, पराश्रित यरिजनों के दुःख–दर्द, वेदना, अभाव, समस्या, जीवन–दर्शन, समाज व्यवस्था आदि की अभिव्यक्ति आदिवासी चेतना एवं साहित्य की अभिव्यक्ति है ।

भारतीय आदिवासी समाज :

देश की सब से पुरानी प्रजाति (आदिवासी) है । यह समुदाय इतिहास की एक लम्बी कड़ी से सम्बन्धित है तथा इन आदिवासियों को कई नामों से जाना व पहचाना जाता है । प्रायः इन्हें आदिवासी के अलावा वनवासी, गिरिजन आदि नामों से भी पुकारते हैं । भारत के प्रमुख आदिवासी समुदायों में संथाल, गोंड, मुंडा, खडिया, हो, बोडो, भील, खासी, सहरिया, गरासिया, मीणा, उरांव, बिरहोर आदि है ।

महात्मा गाँधीजी ने आदिवासियों को ‘गिरिजन’ कह कर पुकारा है । आमतौर पर आदिवासियों को भारत में जनजातीय लोगों के रूप में जाना जाता है । आदिवासी मुख्य रूप से भारतीय राज्यों – उड़ीसा, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र आंध्रप्रदेश, बिहार, झारखंड, पि म बंगाल में अल्प संख्यक है, जबकि भारतीय पूर्वोत्तर राज्यों में वह बहुसंख्यक है, जैसे मिजोरम । डॉच बीच एसच गुहा इनको तीन भू–भागो में बाँटते हैं –

(1) **उत्तर–पूर्वी प्रदेश :**

शिमला, लेह, लुशाई की पहाडियाँ तथा मिरमी का क्षेत्र, पूर्वी कश्मीर, पूर्वी पंजाब, उत्तरप्रदेश के उत्तरी भाग, हिमाचल प्रदेश ।

***પ્રો. ડા. સુરવીરસિંહ આઈ. ઠાકોર, આર્ટસ્ એન્ડ કોમર્સ કૉલેજ, ઓલપાડ, જિ. સુરત**
Associate Professor, Dept of Sanskrit

2) **मध्यवर्ती प्रदेश :**

नर्मदा और गोदावरी नदियों के बीच का पर्वतीय भाग, मध्यप्रदेश के गौड, राजस्थान के भील, छोटा नागपुर के संथाल, उडीसा के कान्ध का समावेश होता है ।

(3) **दक्षिणी प्रदेश :**

मैसुर, ट्रावनकोर, कोचीन, हैदराबाद, आन्ध्रप्रदेश तथा मद्रास आते हैं ।

आदिवासी समुदाय की परिभाषा :

सामान्यतः आदिवासी समुदाय अनेक परिवारों से निर्मित प्रादेशिक या क्षेत्रीय समूह है । समूह या समुदाय के सभी सदस्य एक ही भाषा या बोली का प्रयोग करते हैं । प्रत्येक आदिवासी समुदाय का अपना नि ित नाम होता है और अधिकतर आदिवासी समुदायों में अनकी उत्पत्ति कथा मिलती है । समूह का विशिष्ट नाम उनकी पहचान का प्रतीक है । नाम के जरिये ही ये समुदाय एक–दूसरे से अलगाते हैं । प्रत्येक आदिवासी समुदाय के अपने सामाजिक नियम और निषेध होते हैं । हरेणा समुदाय में अपना 'जाति पंच' रहता है । प्रत्येक समुदाय की अपनी विशिष्ट संस्कृति होती है । अपनी विशिष्ट संस्कृति से अन्य समुदायों से अपनी अलग पहचान बनती है । हर आदिवासी समुदाय का अपना धर्म होता है । प्रत्येक आदिवासी समुदाय परंपरागत व्यवसाय से जुड़ा रहता है ।

आदिवासी जीवन एवं आर्थिक प्रबन्ध :

देश के पूरे आदिवासियों के रहने व बसवाट की संरचना को ध्यान में रखें तो स्पष्ट होता है कि आदिवासी का एक व्यापक हिस्सा इधर–उधर बस्तियों या गाँवों में निवास करते हैं । आदिवासियों में एक भील जाति पायी जाती है, जिनका बसवाट भी इधर–उधर या छिट–पुट ही जैसा है । छिट–पुट बसवाट की बुनियादी हानि के होते हुए भी, यह बसवाट इस क्षेत्र के भीलों की विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान है । लेकिन अब आदिवासी जीवन में नये प्रबन्धन की आवश्यकता मजसूस की जाने लगी है । अब भील जाति जो पर्वतों व पहाडी इलाकों को छोड़कर मैदानों में बसवाट कर गये । भील स्वयं अपना मकान बनाते हैं, घर के सभी लोग मजदूरी करते हैं । भीलों का मुहल्ला किसी दूसरे मुहल्ले से पृथक होता है । यह अन्तर व भेद बसने की बल्कि दक्षणों की है । साल में ग्रामीणों में एक मौका ऐसा आता है, जब ग्रामीण जनों मिलझुल कर अपना काम करते हैं । जन्म–मरण और विवाह शादी पर जब कोई कार्यक्रम होता है तो ग्रामीण जनों को निमंत्रि करते हैं । इसी तरह गाँव में मृत्यु होती है तो बिना बुलाये मृत्यु की ढोल की आवाज सुनकर हर कोई व्यक्ति दौड़ पड़ता है ।

ग्रामीणों से कुछ प्रथाओं पर कार्यक्रम होते रहते हैं । इन आयोजनों में गवरी, नवरात्रि और होली का आयोजन होता है । आदिवासियों में नवरात्रि पूजा वर्ष की महत्त्वपूर्ण घटनाओं में से एक है । भील गाँव की एकता का बहुत अच्छा प्रतीक है – नवरात्रि पूजा ।

गाँव मालिक या मुखिया को कई नामों से पुकारा जाता है, जैसे – रावत, पटेल, मुखी इत्यादि । इसकी स्थिति वंशानुगत है जब पंचायती राज व्यवस्था ने मुखिया के अधिकार कम कर दिये लेकिन प्रभाव में कमी नहीं है ।

भील जीवन सरल अनुशासित एवं सुप्रबन्धित है । इसी कारण गाँव का संगठन शक्तिशाली होता है । आदिवासी परम्पराएँ कुछ ऐसी है जो कि संपूर्ण गाँव को एकता एवं सुदृढ़ता के वातावरण में पिरो रखती है । गाँव की संस्थाएँ बाह्य विघटनकारी तत्त्वों पर अंकुश रखने में सशक्त है, फिर भी आज भील गाँव की एकता एवं सुप्रबन्ध में टूटन आ रही है । इसके उपरान्त भी आदिवासी जीवन आज भी प्रबन्धन शैली में दक्ष है और इसी के अनुसार आदिवासी विकास का हल भी ढूँढा जा सकता है ।

आदिवासी समाज एवं उत्थान :

जितने आदिवासी समूह भारत में हैं, उतने ही आदिवासी समाज भी । लेकिन यह बात हिन्दू जातियों पर लागु नहीं होती, क्योंकि हिन्दू संस्तरीकरण व्यवस्था के कारण वर्ण व्यवस्था में निि त स्थान है । आदिवासियों में ऊँची और कम ऊँची व्यवस्था नहीं है । प्रत्येक समूह अपने आप में स्वतंत्र समाज का रूप है ।

आदिवासी जंगलों या पहाड़ों में रहते हैं या मैदानों में । शोषण, गरीबी, निरक्षरता और पिछड़ापन इनके जीवन के अंग रहे हैं । इनके आसपास का वातावरण ऐसा नहीं रहा जो कोई भरोसे मंद, आर्थिक स्रोत जीवन यापन के लिए दे सके । परम्परा से आदिवासी वनों एवं वन उपज पर आधारित रहे हैं । इनकी वन प्रधान अर्थ–व्यवस्था में कृषि की भूमिका कम रही है, क्योंकि आदिवासी पूरा कृषक नहीं रहे, अभी कुछ वर्षो पूर्व ही उन्होंने कृषि को अपनाया है । इनमें किसी एक व्यवसाय का चलन नहीं । जैसे जैसे कार्यो में विविधता आती गई वह उन्हीं को अपना कर अपना काम चला लेते हैं । इनका प्राकृतिक संसाधनों पर नियंत्रण एवं उपयोग भरपूर रही है ।

आदिवासी विकास – दशा एवं दिशा :

पिछले पाँच दशकों में भारत के आदिम जातियों में विशेष प्रकार के परिवर्द्धन हुए हैं और अब इन समुदायों के वे दिन बीत चुके हैं जो आज से कुछ दशक पूर्व था । वर्तमान आदिवासी भारत के उन विभिन्न वर्गो व समुदायों में सम्मिलित हैं । भारत के आदिवासी समयानुसार भले ही अलग–विलग रहे हैं, परंतु ये लोग भारतीय सभ्यता व संस्कृति और हमारी सोच व चेतना में सम्मिलित रहे हैं । देश के अनेक भागों के आदिवासी और गैरआदिवासी पारिवारिक सम्बन्ध, प्रशासनिक नियंत्रण राजनीतिक आंदोलन और ऐसे ही अन्य मामलों में एक–दूसरे के काफी निकट है ।

महात्मा गाँधी का आदिवासियों की ओर दृष्टिकोण :

महात्मा गाँधीजी को भारत के किसानें की जहाँ चिन्ता थी उससे कहीं अधिक भारत के दलित वर्गो की थी । आदिवासियों की समस्या की ओर यद्यपि उनका ध्यान 1940 तक नहीं गया । गाँधीजी के निकटस्थ सहयोगी ठक्कर बापा ने गाँधीजी के आदिवासी समस्याओं के प्रति पेनी दृष्टि पैदा करने में सहयोग प्रदान किया । 1941 के दिसम्बर में

गाँधीजी ने 13 सूत्रिय पुनः निर्माण कार्यक्रम तैयार किया और 1942 तक आदिवासी कल्याण को 14वाँ बिन्दू मानकर सूचि में सम्मिलित किया और समय के साथ साथ महसूस किया कि आदिवासियों की दशा, गरीबी, आर्थिक शोषण, पिछड़ेपन के कारण हरिजनों के बेहतर नहीं है । उन्होंने महसूस किया कि आदिवासि समुदाय राष्ट्रीय मुख्यधारा से बहुत दूर है उन्हें पूर्ण ध्यान एवं सहयोग देने की आवश्यकता है । यहीं से हमें गाँधीजी के आदिवासी दृष्टिकोण में बदलाव नजर आता है ।

—00—